किसलय

बाल कहानी संग्रह

अनीता चंद्राकर

आलोक प्रकाशन

किसलय

बाल कहानी संग्रह

अनीता चन्द्राकर

आलोक प्रकाशन

(c) 2022 - अनीता चन्द्राकर

मेरी बात

प्रिय बच्चों,

हम सब के जीवन में कई ऐसी घटनाएँ घटती हैं जो हमारे सोच की दिशा ही बदल देती है। कभी-कभी अपने मन की कुछ बातें हम किसी के साथ बाँट नहीं पाते तब मन बहुत व्याकुल हो जाता है। हम सब ऐसे समय में बहुत अकेला महसूस करते हैं। ऐसा भी होता है कि कई बार स्कूल में आपके सहपाठी आपको चिढ़ाते हैं, आपसे अच्छे से बात नहीं करते या आपके कोई दोस्त नहीं बन पाते। पर कोई बात नहीं, कुछ समय के बाद सब ठीक हो जाता है। हम सब में कमियाँ होती है, पर उन कमियों से हमें दुखी नहीं होना चाहिए। हमें हमेशा सकारात्मक सोचना चाहिए। बच्चों, आप सब के जीवन में कोई न कोई ऐसा व्यक्ति जरूर आया होगा, जिन्हें आप अपना आदर्श मानते होंगे। कोई न कोई ऐसा शिक्षक जरूर मिला होगा जो आपको समझता होगा। आप अपने मन की बात उनसे कह पाते होंगे। जिन्होंने आपकी समस्या को समझते हुए आपको सहयोग और स्नेह आधार देकर आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया होगा। विद्यार्थी जीवन की ऐसी ही घटनाओं को मैंने अपनी कहानियों में गूँथा है। इस पुस्तक को पढ़कर आप कहानी के पात्रों से खुद को जुड़ा हुआ महसूस करेंगे। एक अच्छी सोच और विश्वास के साथ आपके लिए मैंने इन कहानियों को रचा है। इन कहानियों को पढ़ने से अगर आपको समस्याएँ हल करने में मदद मिलेगी तो मुझे बहुत खुशी होगी। मेरी यह पुस्तक ' किसलय' आप सबकी ज़िंदगी को ख़ुशियों से भर दे, इसी उम्मीद, आशा और ढेरों स्नेह के साथ यह कहानी संग्रह 'किसलय' आप बच्चों को समर्पित कर रही हूँ।

अनीता चंद्रकर

अनुक्रमणिका

मेला 5

आजादी 10

मिनी 12

बदलाव 15

हौसले की उड़ान 19

स्नेह की औषधि 21

बाजार 23

भूल का एहसास 25

प्रोत्साहन 27

सफेद दाग 29

पायल 30

अनुशासन 31

मुर्गे की चोरी 33

गुड़िया की शादी 35

रक्षाबंधन का उपहार 37

मंच का भय 40

लक्ष्मी की प्लेट 42

मदद 44

मेला

दीनू एक छोटे से गाँव में एक संयुक्त परिवार में रहता था। वह आठ-नौ साल का बालक था। कार्तिक पूर्णिमा के दिन, हर दिन के विपरीत वह सुबह जल्दी उठकर नहा धो लिया और नये कपड़े पहनकर तैयार हो गया। दीनू बहुत खुश था। आखिर वह दिन आ ही गया जिसका वह एक महीने पहले से इंतजार कर रहा था। आज दादाजी सभी बच्चों को पुन्नी मेला ले जाने वाले हैं। हर साल उनके दादाजी घर और आस पड़ोस के सभी बच्चों को बैलगाड़ी में बिठाकर, खारुन नदी के किनारे महादेव घाट में, कार्तिक पूर्णिमा के दिन लगने वाले मेले में ले जाते थे। घर में चहल पहल शुरू हो गई थी। सुबह से ही दीनू की माँ रसोई घर में नाश्ता और खाना बनाने में लगी थी और उसकी दादी लिपाई-पोताई, चौक-चंदन के काम में। महिलाएँ गली में अपने अपने घर के दरवाजे के सामने की जगह को गोबर से लीप रहे थे। गली में एक भी बच्चा नजर नहीं आ रहा था। सभी मेला जाने की तैयारी में लगे थे।

प्रेमू काका दो चार पहले दिन ही बैलगाड़ी और बैलों को चकाचक तैयार कर कर लेते थे। उस दिन भी बैलगाड़ी पूरी तरह से सज-धज गई थी। बैलों के सींग में नीले रंग के पेंट और गले में रंग-बिरंगी गोटियों और घुँघरू वाले माला भी पहनाये जा चुके थे। दीनू की माँ, रास्ते में बच्चों के खाने के लिए पूड़ी सब्जी भी बना चुकी थी। प्रेमू काका गुनगुनाते-गुनगुनाते बैलगाड़ी में दरी, चटाई, नाश्ता, पानी की बोतलें, पैरा, भूसा और कुछ जरूरत की चीजें रखते जा रहे थे। दीनू का उत्साह बढ़ता ही जा रहा था। अब उससे वहाँ रुकना सहन नहीं हो पा रहा था। वह मेला जाने के लिए उतावला हो रहा था। उसने दादाजी से कहा, "कब निकलेंगे दादाजी, अब तो चलो, बहुत देर हो गई है, सभी लोग पहुँच चुके होंगे।"

दीनू की बढ़ती हुई अधीरता को देख, थोड़ी ही देर में सब लोग बैलगाड़ी में बैठकर मेले के लिए रवाना हुए। गाँव की गली से होती हुई जब उनकी सजी-धजी बैलगाड़ी जब निकली तब सफेद रंग के हृष्ट-पुष्ट बैलों पर सब की नजरें टिक गईं। ये देख दादाजी फूले नहीं समाये। उन्हें अपने बैलों को देख बहुत खुशी होती थी। रास्ते भर बैलगाड़ी में मस्ती करते रहे, रास्ते में मिलने वाली हर एक चीज के बारे में वे बातचीत करते जा रहे थे। उनकी चर्चा में चिड़िया, सारस, बगुले, तितली, गिलहरी, कुत्ते, बिल्ली, पेड़ पौधे, नदी, तालाब, मछली, मेंढक, मंदिर, सूरज, चंदा, तारे और न जाने कितनी बातें शामिल थीं। दादाजी के साथ बच्चे हमेशा खुश रहते थे। ऐसे ही हँसते गाते आखिर वे मेले में पहुँच ही गए।

दूर से ही मेले की भीड़ दिखाई दे रही थी। चारों तरफ बैलगाड़ी और बड़ी संख्या में लोग दिखाई दे रहे थे, कहीं-कहीं अन्य वाहनों की कतारें भी दिखाई दे रही थी। मंदिरों के घंटियों की आवाज कानों में सुनाई पड़ने लगी। 'हर-हर महादेव' की गूँज दूर-दूर तक सुनाई दे रही थी। एक खाली जगह देखकर प्रेमू काका बैलगाड़ी को रोके, फिर सभी लोग बैलगाड़ी से उतरे। पहले दोनों बैलों,गंगू-मंगू को एक छायादार पेड़ के तने में बाँधकर, खाने के लिए पैरा भूसा दिया गया। बच्चों के साथ-साथ

प्रेमू काका भी बहुत ख़ुश नज़र आ रहे थे। तभी तो हर काम जल्दी-जल्दी हँसते-गाते कर रहे थे। नीचे दरी बिछाकर सभी लोग कुछ देर विश्राम किये। उसके बाद दादाजी, सभी बच्चों के साथ मेला की ओर चले गए। खारुन नदी पर बने पुल में भी बहुत भीड़ थी। नदी में कई लोग स्नान कर रहे थे। वे लोग हाथ पैर धोकर मंदिर की तरफ गए। सभी मंदिरों में भक्तों की लंबी कतारें लगी थीं, इसलिए दादाजी बाहर से ही दर्शन करके आगे बढ़ गए। मेले में तरह-तरह के बड़े-बड़े झूले दूर से ही दिखाई दे रहे थे। एक तरफ मिठाइयों की दुकान सजी थी। खिलौने, सजावट के समान, मनियारी की दुकान, जूते, कपड़े, घर के उपयोगी सामान, खाने-पीने की वस्तुएँ, सारी चीजें मेले की शोभा बढ़ा रही थीं।

दादाजी दीनू का हाथ पकड़े पकड़े चल रहे थे, क्योंकि दीनू सबसे छोटा था। बाकी बच्चे भी एक दूसरे का हाथ पकड़े-पकड़े दादू के पीछे पीछे चल रहे थे। सबसे पीछे में प्रेमू काका चल रहे थे, ताकि वे सभी बच्चों को देख सकें। सबसे पहले दादाजी बच्चों के लिए ख़ूब सारा गन्ना लिए, ताकि वापसी में बैलगाड़ी में बैठे-बैठे बच्चे उसका आनंद ले सकें और भूख लगने पर खा सकें। मेले में सजी हुई दुकानें और सामान सबका ध्यान खींच रहे थे। सभी बच्चे खिलौने, मिठाई और अपनी-अपनी पसंद की चीजें खरीद रहे थे, पर दीनू सिर्फ देखते जा रहा था। वह अभी तक कोई भी समान नहीं लिया था। दादाजी ने कहा, " बेटा तुम भी तो अब कुछ खरीद लो अपने लिए। देखो सभी बच्चे अपने लिए कुछ न कुछ ले लिए हैं।" "जी दादाजी, जब मुझे अपनी पसंद की चीज मिलेगी तब मैं भी ले लूँगा", दीनू ने कहा। दादाजी के साथ सभी बच्चे हँसते-मुस्कुराते मेले का आनंद ले रहे थे। अचानक दीनू के कदम लोहे की दुकान के सामने रुक गए। अपना हाथ छुड़ाकर वह दुकानदार के पास जाकर मोल-भाव करने लगा। दादाजी ने पीछे मुड़कर देखा। "दीनू बेटा इस लोहे की दुकान में तुम क्या कर रहे हो? आओ इधर आओ, अभी मेले में आगे भी तो जाना है", दादाजी ने कहा"।

"थोड़ी देर रुको दादाजी, मैं अभी हँसिया लेकर आता हूँ", दीनू बोला।

"बेटा, अब तुम हँसिये का क्या करोगे? हमारे घर में तो चार-पाँच हँसिया पहले से ही है", दादाजी ने आश्चर्य से पूछा।

"हमारे घर की हँसिया एकदम पुरानी और टेढ़ी-मेढ़ी हो गई है, सब्जी काटते समय माँ की उँगलियाँ कई बार उससे कट जाती हैं। मुझे माँ के लिए ये नया वाला हँसिया लेना है दादाजी", दीनू ने कहा।

दीनू की बात सुनकर बाकी बच्चे हँसने लगे। उसकी दादी चिढाई, "हँसिया लेकर धान काटने जाना है क्या?" दीनू ने कोई जवाब नहीं दिया। इतने छोटे से बच्चे के मुँह से ऐसी बात सुनकर दादाजी की आँखें नम हो गईं। दीनू की अपनी माँ के प्रति परवाह, चिंता और प्यार देखकर दादाजी गदगद हो गए। दादाजी हँसिया लेकर दीनू को दिए और आगे बढ़ गए।

हँसिया पाकर दीनू बहुत खुश था। उसे ऐसा महसूस हो रहा था मानों वो 'ईदगाह' कहानी का जिम्मेदार बालक 'हामिद' हो। एक बार उसकी कक्षा में उसके गुरुजी, मुंशी प्रेमचंद द्वारा रचित कहानी 'ईदगाह ' बच्चों को सुनाये थे। इस कहानी को सुनकर दीनू की आँखें भर आई थीं। उस नन्हें से बच्चे को उसी समय अपनी जिम्मेदारी का बोध हो गया था। उसके अंदर नैतिकता और कर्तव्य परायणता की नींव डल गई थी। उसने हामिद की तरह नेक बच्चा बनने का संकल्प ले लिया था। हँसिया खरीदकर माँ के प्रति अपना कर्तव्य निभाकर आज उसे असीम आनंद की अनुभूति हो रही थी, और दादाजी दीनू के शिक्षक को मन ही मन धन्यवाद दे रहे थे, क्योंकि बच्चों के भीतर नैतिक गुणों का विकास करने में शिक्षकों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। शिक्षक बच्चों को अच्छा इंसान बनाने के लिए नैतिकता की बीज बोते हैं।

दादाजी भी बच्चों को रोज रात में कहानियाँ सुनाकर जीवन की शिक्षा देते थे। तभी तो सभी बच्चे दादाजी को खूब प्यार करते थे। उन्हें मान सम्मान देते थे और उनका कहना मानते थे। दादाजी अच्छी तरह से जानते थे कि

बच्चों को सुनाई जाने वाली ऐसी शिक्षाप्रद कहानियाँ केवल कहानियाँ ही नहीं होती, बल्कि ये बच्चों के मन में अमिट छाप छोड़कर उनका मार्ग प्रशस्त करती हैं, और उन्हें अच्छा इंसान बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

आजादी

स्वतंत्रता दिवस आने वाला था। कक्षा में गुरूजी बच्चों को स्वतंत्रता संग्राम के बारे में पढ़ा रहे थे। उन्होंने बताया कि गुलाम भारत को स्वतंत्र कराने के लिए भारतवासियों को कई बलिदान देना पड़ा। अनगिनत अत्याचार और दर्द झेलना पड़ा। गुरुजी ने बच्चों को समझाया कि आजादी से बढ़कर कोई सुख नहीं है, सोने का पिंजरा भी हमें खुशी नहीं दे सकता। मनुष्य के साथ साथ सभी पशु पक्षियों को अपनी आजादी प्यारी होती है। उन्हें भी कैद में रहना पसंद नहीं। यह सब सुनते-सुनते राजू को ख़्याल आया कि वे लोग भी तो अपने तोते को पिंजरे में बंद करके रखते हैं। क्या तोते को भी हमारा घर अच्छा नहीं लगता होगा? क्या वह भी उड़ना चाहता होगा। राजू के मन में कई सवाल जन्म ले रहे थे।

उसने घर पहुँचकर सबसे पहले अपने तोते को देखा। तोता पिंजरे में इधर उधर करते हुए बाहर निकलने की कोशिश कर रहा था। राजू को देखकर वह मिट्ठू-मिट्ठू बोलने लगा। राजू उसे हरी मिर्ची खिलाया। रात में तोते को दाल चावल

खिलाकर वह उसे देखता रहा। राजू की माँ बोली, 'क्या हुआ बेटा आज तुम इतने चुपचाप क्यों हो? मिट्ठू को सोने दो, और चलो तुम भी खाना खा लो।' सभी लोग खाना खाकर सोने चले गए पर राजू को नींद ही नहीं आ रही थी। बार-बार गुरूजी की बातें याद आ रही थी। आसमान में उड़ते पक्षियों और पिंजरे में बंद अपने तोते के बारे में वह सोचने लगा। पेड़ों पर फुदकती और फल फूल खाती हुई चिड़ियाँ कितनी ख़ुश रहती हैं। साथ में चहचहाते हुए पक्षी बहुत सुंदर लगते हैं। उसका तोता अकेले पिंजरे में बंद रहता है। उसका कोई साथी भी नहीं है। वह तो उड़ भी नहीं पाता। पिताजी उसके पंख भी काट देते हैं। अगर मुझे अकेले अपने साथियों से दूर किसी कमरे में बंद कर दिया जाए तो मेरा क्या होगा।

यही सोचते-सोचते उनकी आँख लग गई। वह सुबह सबसे पहले उठकर अपने मिट्ठू के पास गया और पिंजरे का दरवाजा खोलकर उसने तोते को आजाद कर दिया। तोता बहुत खुश दिखाई दे रहा था। वह उड़ते-उड़ते बहुत दूर चला गया। जब घर के बाकी लोग उठे तो पिंजरे को खाली देख परेशान हो गए। सब लोग मिट्ठू को इधर उधर ढूँढने लगे। राजू की माँ मिट्ठू-मिट्ठू करके आवाज दे रही थी। "कहाँ चला गया होगा मिट्ठू। पिंजरे का दरवाजा किसने खोला। क्या रात में दरवाजा बंद नहीं था", राजू की माँ मन ही मन में बुदबुदा रही थी। सबको परेशान देख राजू ने डरते-डरते सारी बातें बता दीं। "माँ, आजादी तो सबको प्यारी होती है ना। मिट्ठू को भी तो खुले आसमान में उड़ने का मन करता होगा। हम आजाद है तभी तो खुशी-खुशी स्वतंत्रता दिवस मनाते हैं। इसीलिए मैंने मिट्ठू को भी आजाद कर दिया।"

घर वाले राजू की बात सुनकर उसकी तारीफ किये, और उसके पिताजी पीठ थपथपाए।

मिनी

श्यामू को पालतू जानवरों से बहुत प्यार था। हालांकि अभी वह केवल दस साल का बालक था फिर भी अपने ग्वाले के साथ गायों की देखभाल करता था। गायों और बछड़ों को पैरा, भूसा, घास , खली-चूनी खिलाना, पानी पिलाना, श्यामू को बहुत अच्छा लगता था। वह गैया और बछड़ों को उनके नामों से बुलाता था। उसकी आवाज सुनते ही सब-के-सब रंभाते हुए दौड़े चले आते थे, उसके पास। श्याम बड़े प्यार से उन सब के ऊपर हाथ फेरता था। कभी उनके माथे को खुजला देता। वे सब भी अपनी जीभ से उसे चाट कर अपना प्यार दिखाती थी। घर के बछड़े रंभा, चाँदनी, लाली और नन्दी, यही उसके दोस्त थे।

स्कूल की घन्टी उसके घर तक सुनाई पड़ती थी। जब घन्टी की आवाज उसके कानों में पड़ती तब उसको ख़्याल आता कि उसे स्कूल जाना है। वह झटपट तैयार होता और स्कूल की तरफ भागता। उसकी माँ उसे समझाते-समझाते थक गई थी पर श्यामू के कान में जूँ तक नहीं रेंगता था। गाँव की गलियों में मिलने वाले हर पशु पक्षियों को वह प्यार से देखते रहता। कभी पिल्ले को घर ले आता, कभी बिल्ली के बच्चे को, कभी किसी घायल चिड़िया को। बाकी बच्चे जानवरों को पत्थर फेंककर मारते तो श्यामू का दिल पसीज जाता। अपनी माँ से कहकर मरहम पट्टी करवाता और उसका ख़्याल रखता।

उस छोटे से बच्चे के मन में न जाने कहाँ से इतनी दया आ गई थी। वह बड़ा होकर पशु पक्षियों की सेवा और देखभाल करना चाहता था।

एक दिन वह बिल्ली के बहुत ही छोटे बच्चे को घर ले आया। उसका नामकरण भी कर डाला। उसका नाम रखा - 'मिनी'। अब उनकी मंडली में मिनी भी शामिल हो गई।

उसकी माँ को बहुत गुस्सा आता था, क्योंकि वह जगह-जगह गंदगी कर देती थी और श्यामू पढ़ाई लिखाई छोड़कर दिन भर मिनी के पीछे लगा रहता था। "पहले गाय बकरी और अब बिल्ली भी। बेटा तुम अपनी पढ़ाई कब करोगे? जाओ इसे बाहर छोड़कर आओ, नहीं तो मैं इसे कहीं फेक दूँगी", माँ ने कहा।
फेंकने की बात सुनकर श्यामू डर गया। वह मिनी को पास के बगीचे में छोड़ आया। अगले दिन सुबह वह उसे देखने गया। वह उसे इधर-उधर ढूँढता रहा। अचानक उसने देखा एक कोने में मिनी मरी पड़ी थी। वह वही बैठे-बैठे रोता रहा। फिर घर आकर चुपचाप बैठ गया। माँ ने पूछा, "क्या हुआ? क्यूँ मुँह उतारे बैठा है? चल तैयार हो और स्कूल जा।"

"माँ मिनी मर गई, अब मैं किसी पशु पक्षी को घर लेकर नहीं आऊँगा", श्यामू ने कहा।

एक दिन गुरुजी कक्षा में बच्चों से पूछ रहे थे, "बताओ रामू तुम बड़े होकर क्या बनना चाहते हो।"

"गुरुजी मैं इंजीनियर बनना चाहता हूँ।"

"अच्छा रमेश तुम क्या बनना चाहते हो।"

"जी गुरूजी मैं शिक्षक बनना चाहता हूँ।"

"अब श्यामू तुम बताओ, क्या बनना चाहते हो।"

गुरुजी मैं पशु पक्षियों की अच्छे से देखभाल करना चाहता हूँ। इसके लिए क्या बनना होगा?"

गुरुजी ने कहा, "बेटा इसके लिए तुम्हें पशु चिकित्सक बनना पड़ेगा। जिसके लिए खूब पढ़ाई करनी पड़ेगी। अगर तुम बड़े होकर सही तरीके से उनकी देखभाल और इलाज करना चाहते हो तो तुम्हें मन लगाकर पढ़ना होगा। वैसे तो अभी भी तुम उनकी सेवा करते हो पर अगर पशु चिकित्सक बन गए हो बीमार पशुओं का इलाज भी कर पाओगे।"

छोटे से बच्चे के मन में गुररूजी की कही बात बैठ गई। बच्चों का मन तो गीली मिट्टी की तरह होता है जैसा चाहो वैसे ढाला जा सकता है। उस दिन के बाद श्यामू मन लगाकर पढ़ाई करता। घर में भी अपनी पढ़ाई के लिए समय निकालता। रंभा, चांदनी, लाली और नंदी को याद किया हुआ पाठ सुनाता। श्यामू को पढ़ते देख अब घर वाले भी खुश थे।

बदलाव

चारों तरफ हरे भरे पेड़ों से घिरा गाँव का वो सरकारी विद्यालय सहज ही हर किसी का ध्यान आकर्षित कर लेता था। अच्छी पढ़ाई के कारण उस विद्यालय की ख्याति दूर-दूर तक फैली थी। उसी सरकारी विद्यालय में दीपा कक्षा छटवीं में नव प्रवेश ली थी।

खेलकूद का कालखंड था। विद्यालय में सभी बच्चे अपने-अपने समूह के साथ खेलकूद में मगन थे। बच्चों की धमा चौकड़ी और खिलखिलाहट की आवाज दूर-दूर तक सुनाई दे रही थी। पर दीपा गुमसुम सी अकेले एक कोने में बैठी थी। कोई उसकी उदासी को देख ही नहीं पा रहा था। अभी तक उस नए विद्यालय में उसका कोई दोस्त भी नहीं बन पाया था। दीपा के गाँव में केवल प्राथमिक शाला थी, इसीलिए अधिकांश लड़कियाँ पाँचवी कक्षा के बाद अपनी पढ़ाई छोड़ देती थीं।

दीपा आगे पढ़ना चाहती थी। उसने अपनी सहेलियों को मनाने की कोशिश की। उसने कहा, "पढ़ना लिखना बहुत ज़रूरी है। पढ़ाई से ही हमारा जीवन खुशहाल बनेगा और दुनिया में हमारी एक पहचान बनेगी।"

"हमारे घर वाले हमें उतनी दूर नहीं भेजेंगे, वे हमें पढ़ाना ही नहीं चाहते। दीपा तुम पढ़ लिखकर अपने सपने पूरे करो, " उसकी सहेलियों ने कहा।

"मैं अकेली उतनी दूर कैसे जाऊँगी बहन, तुम लोग भी चलोगे तो दूरी का पता नहीं चलेगा," दीपा ने कहा।

दीपा के समझाने पर भी उनकी सहेलियाँ आगे पढ़ने के लिए तैयार नहीं हुईं, इसीलिए अपने गाँव से दीपा अकेली ही आगे की पढ़ाई कर रही थी। वह चार किलोमीटर साइकिल चलाकर विद्यालय जाती थी। अपने सपने को पूरा करने के लिए उसने जिस विद्यालय में प्रवेश लिया वह उसके लिए बिल्कुल अलग था। उस विद्यालय के शिक्षक और वहाँ पढ़ने वाले सभी बच्चे उसे अजनबी लगते थे। फिर भी दीपा अपने आपको ढ़ालने की कोशिश कर रही थी। वह सब के साथ घुल मिलकर मिलकर रहना चाहती थी, जिसके लिए उसने पहल भी की।
परंतु जब भी दीपा अपनी कक्षा की लड़कियों के पास जाती, तब सभी लड़कियाँ उसे ये कहकर चिढ़ाती थी, "काली कलूटी बैंगन लूटी, काले कौएँ की आँख फूटी।" ऐसे ही कई शब्दों से दीपा का दिल दुखाने की कोशिश करती थीं। खेलना तो दूर कोई उसके साथ बात भी नहीं करती थी। ये सब देख सुनकर दीपा की आँखों से अश्रुधार बहने लगते।

दीपा का गहरा साँवला रंग उसके दुख का कारण बनता जा रहा था। जो भी उसे देखता, उसके रंग रूप को लेकर ताने मारता। "इतनी काली है, कहाँ से दूल्हा लाएँगे इसके लिये?" ये वाक्य तो वह बचपन से सुनती आ रही थी। "अरे दीपा की माँ, बेटी को कोई उबटन, क्रीम तो लगाओ, थोड़ा ध्यान दो इसके रंग रूप पर।" बाजू वाली सुखिया काकी हमेशा दीपा की माँ को यही सुनाती रहती थीं।

नन्ही सी बच्ची ख़ूब रोती थी। अपनी माँ से कहती, "माँ मुझे कहीं नहीं जाना है। सब मुझे चिढ़ाते हैं या फिर मेरे चेहरे पर खूब सारा पावडर क्रीम लगाकर मुझे सुंदर और गोरी बना दो, तभी मैं बाहर निकलूँगी।"

दीपा की माँ अपनी बिटिया से बहुत प्यार करती थी। उसके दिल का टुकड़ा थी वह। वह उसे बड़े प्यार से अपने तरीके से समझाने की कोशिश करती थी। "मेरी

बेटी तो हीरा है। सबसे होशियार, सबसे समझदार। एक दिन पढ़ लिखकर पूरी दुनिया में हमारा नाम रोशन करेगी। रंग-रूप तो चार दिन का है बेटा, पर अच्छे गुण हमेशा काम आएँगे।"

माँ के समझाने पर वह पुराने परिचितों के व्यंग्य बाणों पर ध्यान देना छोड़ दी थी। पर इस नई शाला में दीपा को कुछ समझ नहीं आ रहा था। अनजान जगह में यूँ अकेली, वह कैसे पढ़ पाएगी? उन लड़कियों के मुँह से निकलने वाले शब्दबाण उसके हृदय को छलनी कर देते थे। उसने सोचा था कि पुराने विद्यालय की तरह यहाँ भी उसकी कुछ सहेलियाँ बन जाएंगी। पर यहाँ तो स्थिति और भी ज्यादा खराब थी। लड़कियाँ रंग रूप को ही महत्व देती थीं।

दीपा का मन नये विद्यालय में नहीं लग रहा था। वह बड़ी मुश्किल से विद्यालय जाने के लिए तैयार होती थी। पढ़ाई से भी उसका मन उचटने लगा। वह सोचती कि ऐसी पढ़ाई का क्या मतलब जो रंग रूप के कारण इंसानों में किये जाने वाले भेदभाव को खत्म न कर पाए। जो मन को साफ न कर पाए। अब मुझे ऐसे विद्यालय में नहीं पढ़ना। नाम बड़ा दर्शन छोटा है यहाँ तो।

अब दीपा अपने गाँव के ऐसे बच्चों के साथ खेलती रहती थी जो विद्यालय का मुँह ही नहीं देखे थे या किसी कारणवश बीच में पढ़ाई छोड़ दिये थे। दीपा के माता पिता उसे समझाते तब ले देकर वह विद्यालय जाती थी। उस पर माँ की समझाइश का असर कम और सहपाठी लड़कियों के तानों का असर ज्यादा होने लगा था।

विद्यालय में रोज-रोज ताने सुनकर दीपा खुद से चिढ़ने लगी। अभी वह छोटी थी फिर भी लोगों से मिलने वाली उपेक्षा को बहुत अच्छे से समझती थी। पर अपनी पीड़ा किसे बताये वह। बस भीतर ही भीतर घुटती जा रही थी।

उसी समय उनके विद्यालय में हिंदी की नई शिक्षिका आई। दिखने में सुंदर, मध्यम कद काठी और लंबे काले घने बाल थे उसके। उसकी आवाज बहुत मधुर थी। उस विद्यालय में अभी वह नयी थी इसलिए वह सब के आकर्षण का केंद्र थी। बच्चों के बीच उसी की चर्चा चलती रहती। दीपा उन सबकी चर्चाओं से दूर

अपने भविष्य के लिए चिंतित थी। शिक्षिका पहले ही दिन बच्चों का मन जीत ली।

वह इतने सुंदर और रोचक तरीके से पाठ पढ़ाती थी कि सभी बच्चे ध्यान मग्न होकर सुनते थे। दीपा को भी इस विद्यालय में पहली बार कक्षा में अच्छा लगा। वह उस शिक्षिका से धीरे-धीरे जुड़ने लगी और पढ़ाई में मन लगाने लगी। पर अभी भी वह अकेली ही बैठी रहती थी। नयी शिक्षिका की नजर दीपा पर गई। दीपा का ऐसे सबसे अलग चुपचाप बैठे रहना, उदास रहना, शिक्षिका के मन को परेशान कर रहा था।

शिक्षिका ने दीपा के इस व्यवहार का कारण जानने की कोशिश की। दीपा के सिर पर प्यार से हाथ रखकर उसने पूछा, "दीपा बेटी अकेली क्यों बैठी हो, जाओ सबके साथ खेलो। देखो सभी बच्चे कैसे मजे ले रहे हैं। तुम ऐसे उदास क्यों रहती हो बेटी, मुझे बताओ।" शिक्षिका का स्नेह पाकर दीपा उनके गले लगकर जोर-जोर से रोने लगी, और सारी बात बता दी। शिक्षिका को ये जानकर बहुत आश्चर्य हुआ कि ये छोटे-छोटे बच्चे भी रंग रूप को लेकर इतना भेदभाव करते हैं। व्यंग्य करना वे कहाँ से सीख गए।

फिर अगले दिन शिक्षिका बच्चों को कहानियों और उनके उदाहरणों के द्वारा समझाई कि बाहरी रंग रूप से कुछ नहीं होता, हमें स्वच्छ और स्वस्थ रहना चाहिए। अपने मन को सुंदर बनाना चाहिए। मनुष्य का साँवला रंग अभिशाप नहीं है। हम सबको इस दुनिया में प्यार से रहना है और इसे सुंदर बनाना है। सभी के साथ अच्छा व्यवहार करना है।

इसी तरह शिक्षिका बच्चों को पढ़ाई के साथ-साथ जीवन जीने की कला भी सिखाती थी, जिससे उन बच्चों में बदलाव आने लगा। अब वे दीपा के साथ अच्छा व्यवहार करने लगे। पर सबसे ज्यादा बदलाव दीपा में आया। वह मानसिक रूप से मजबूत होने लगी। पढ़ाई में पूरा ध्यान लगाकर अपनी जिंदगी सँवारने की राह में आगे बढ़ने लगी। शिक्षिका दीपा के इस बदलाव से बहुत खुश हुई।

हौसले की उड़ान

उमा एक होनहार छात्रा थी, पढ़ाई के साथ-साथ शाला की अन्य गतिविधियों में भी वह भाग लेती थी। वह सरकारी स्कूल में कक्षा बारहवीं में पढ़ती थी। सभी शिक्षक उसके अच्छे स्वभाव के कारण उसे बहुत पसंद करते थे। मेधावी और अनुशासित होने के कारण स्कूल से उसे किताबें और कापियाँ मिल जाती थी।

हर साल की भाँति कक्षा ग्यारहवीं के छात्रों ने बारहवीं वालों के लिए विदाई समारोह का आयोजन किया। सभी बच्चे अपनी-अपनी प्रस्तुति दे रहे थे। उमा की बारी आई तो वह बोलते-बोलते रो पड़ी। उसको रोते देख सभी बच्चे रोने लगे। उमा को बोलने के लिए जो शीर्षक मिला था वह था, 'मेरा सपना।'

जब किसी प्रतिभावान बच्चे का सपना अधूरा रह जाने की पूरी संभावना हो तो वह रोयेगा ही। उमा के पिताजी बहुत पहले ही इस दुनिया से जा चुके थे। उसकी माँ ही तीनों भाई बहनों की परवरिश करती थी। घर की आर्थिक स्थिति भी ठीक नहीं थी। उमा का एक छोटा भाई और एक छोटी बहन थी। वे दोनों भी उसी सरकारी स्कूल में पढ़ते थे। उमा की माँ पहले ही बोल चुकी थी कि बारहवीं के बाद उसे नहीं पढ़ा पाएगी और उसकी शादी कर देगी।

इसी बात को सोचते-सोचते वह रो पड़ी थी। उसकी पढ़ाई छूट जाएगी तो वह अपने सपनों को कैसे पूरा करेगी। माँ तो जैसे तैसे उसकी शादी निपटाकर एक

भार से मुक्त होना चाहती थी। उमा के शिक्षकों ने उसका हौसला बढ़ाया और वार्षिक परीक्षा की अच्छे से तैयारी करने के लिए कहा। वार्षिक परीक्षा भी हो गई, उमा इस साल भी अपनी कक्षा में टॉप की। जब वह स्कूल में अपनी अंकसूची लेने आई तो उसका चेहरा मुरझाया हुआ था, क्योंकि उसकी शादी तय हो चुकी थी। स्कूल से जाने से पहले वह अपनी सबसे प्रिय शिक्षिका के पास गई। उसकी शिक्षिका ने उसे गले लगाकर इतना ही कहा - "बिटिया चाहे जो भी हो जाये अपनी पढ़ाई जारी रखना ,एक दिन तुम अपना सपना जरूर पूरा करोगी।"

विवाह के बाद भी उमा प्राइवेट परीक्षा दिलाती रही और स्नातक कर ली। कुछ सालों में वह प्राथमिक विद्यालय की शिक्षिका बन गई। नौकरी के साथ-साथ वह पढ़ाई भी करती रही। वह नेट पास कर ली। कड़ी मेहनत करते हुए अंततः कॉलेज के सहायक प्राध्यापक की परीक्षा भी उत्तीर्ण कर ली। इस तरह लगन, दृढ़ संकल्प और मेहनत से वह अपने सपने को पूरा कर ली। वह बार-बार अपने शिक्षकों और अपनी उस प्रिय शिक्षिका को धन्यवाद दे रही थी जिन्होंने कठिन समय में उसका हौसला बढ़ाया था।

स्नेह की औषधि

चल अब मुर्गा बन जा, गधा कहीं का, एक दिन भी होमवर्क करके नहीं लाता। बोझ है बोझ, इस धरती पर तू। कक्षा में गुरूजी गोपाल को आज फिर डाँट रहे थे और मुर्गा बनने की सजा दे रहे थे। जैसे ही वह मुर्गा बनने के लिए नीचे झुका, सारे बच्चे खी-खी करके हँसने लगे। गोपाल अंदर ही अंदर रो रहा था। आखिर कब तक आँसू बहाता, ये तो हर रोज की बात थी। उसने सोचा घर में तो इससे भी बदतर स्थिति रहती है, पिताजी रोज घर में नशा करके आते हैं, सब के साथ लड़ाई झगड़ा और मारपीट करते रहते हैं।

गोपाल पढ़े तो कब पढ़े, बिना पढ़े होमवर्क कैसे करे उसे तो कुछ भी समझ में नहीं आता था। झुग्गी बस्ती में रहने वाला गोपाल गुरूजी की नजरों में एक मूर्ख बालक था। वे रोज उसे सजा देते थे, शायद ये सोचकर कि गोपाल सुधर जाएगा, पर कुछ भी नहीं बदला। गोपाल बिना गृहकार्य किये स्कूल आ जाता और गुरूजी के कहने पर चुपचाप मुर्गा बन जाता। उनके सहपाठी भी उनकी खिल्ली उड़ाते थे। उनकी शाला में एक दिन संकुल स्तरीय खेलकूद प्रतियोगिता हुई, जिसमें गोपाल भी भाग लिया। गोपाल दौड़ में प्रथम स्थान प्राप्त किया। उसकी खुशी का ठिकाना

नहीं था क्योंकि उस दिन गुरूजी उसे गले से लगा लिए। गोपाल की आँखें छलछला गई थी, आज पहली बार उसे इतना प्यार मिला था। जिला स्तरीय खेलकूद प्रतियोगिता में भी उसने प्रथम स्थान प्राप्त किया।

पुरस्कार वितरण के समय अपना पुरस्कार पाकर उसे खुद पर गर्व हो रहा था। मंच से नीचे उतरकर उसने अपना शील्ड गुरूजी के हाथों में थमा कर कहा - "गुरूजी इसे स्कूल में ही रख लीजिए, मेरे घर में इसकी कद्र नहीं होगी।"

गुरूजी उसे आश्चर्य से देखने लगे। उन्हें बात समझने में देर नहीं लगी। दूसरे दिन स्कूल में गुरूजी गोपाल से अकेले में बड़े स्नेह से, उनके घर के बारे में बातचीत किये। गोपाल ने रोते-रोते सब कुछ बता दिया। अब गुरूजी को गोपाल के पढ़ाई में पिछड़ने का कारण समझ आ गया। उन्होंने पढ़ाने का अपना पुराना तरीका बदलने का विचार किया। अब वे खेल-खेल में पढ़ाना शुरू किए। गोपाल को अतिरिक्त समय देकर उसे अलग से सिखाना शुरू किया। धीरे-धीरे गोपाल सीखने लगा। पूरे मन से पढ़ाई करने लगा। शिक्षक के स्नेह और मार्गदर्शन से गोपाल पढ़ाई में भी आगे हो गया।

<u>बाजार</u>

सब्जी बेचने वालों की तेज आवाज के कारण राखी की नींद हर रोज सुबह-सुबह ही खुल जाती थी। उसके घर के पास लगने वाला सब्जी बाजार दूर-दूर तक प्रसिद्ध था, जहाँ तरह-तरह की सब्जियाँ, फल-फूल, मसाले, कपड़े, घर में काम आने वाली उपयोगी वस्तुएँ, खिलौने, तथा खाने पीने के अनेक समान मिलते थे।

सुबह-सुबह ही चहल पहल शुरू हो जाती थी, और सब्जी वालों का जोर-जोर से चिल्ला-चिल्ला कर सब्जी बेचने का विशेष तरीका सब को जगा देता। नहीं चाहते हुए भी राखी को भी सुबह-सुबह ही उठना पड़ता था। उसके कानों में बाजार से आने वाली आवाज गूँजती ही रहती थी।

सुबह जल्दी उठने की आदत के साथ-साथ, और फायदे भी राखी को मिलने लगे थे। सुबह उठकर उन हरी-हरी ताजी सब्जियों को देखकर उसका मन प्रसन्नता से खिल उठता था। वह रोज अपनी दादी के साथ बाजार जाती थी और ताजी सब्जियाँ खरीदती थी। विविध प्रकार की भाजियों, सब्जियों और फलों के नाम से भी वह भली भाँति परिचित हो चुकी थी। दादी के साथ वह मोल-भाव भी करना सीख गई थी। विक्रेताओं द्वारा अलग-अलग तरीकों से बोलकर, हर रोज अलग-अलग

ग्राहकों को लुभाने का तरीका भी समझने लगी थी। इसीलिए दाम कैसे कम कराना और सही दाम पर समान खरीदना वह बख़ूबी जानती थी। बाजार में लगभग सभी से उसका परिचय हो गया था। राखी के बात करने का तरीका और उसकी प्यारी मुस्कान सब का मन मोह लेती थी।

मोल भाव करते हुए ग्राहकों और विक्रेताओं के बीच की बातचीत बड़ी मजेदार होती थी। बच्चों का खिलौने के लिए जिद करना और अपने पसंद के खिलौने पाकर ख़ुश होना, महिलाओं, पुरुषों द्वारा जाँच परखकर घर के लिए सामान खरीदना, सुंदर-सुंदर कपड़े लेना, ये सब राखी रोज ही देखती थी। चाय वाले का बीच-बीच में आकर, लो चाय लो, गरमागरम चाय लो, कहकर सब को चाय पिलाना कितना आनंददायी होता था। बाजार में खरीददारी के साथ-साथ राखी का एक तरह से प्रशिक्षण चल रहा था। कैसी सब्जियाँ लेना चाहिए, कितना लेना चाहिए ये सब वो जान गई थीं। जोड़ना-घटाना, क्रय-मूल्य, विक्रयमूल्य, लाभ-हानि का भी ज्ञान उसे बाजार से ही मिला। तभी तो वह स्कूल में गणित के सवाल फटाफट हल कर लेती थी। घर में राखी के दादा-दादी भी अपने पैसे गिनवाने, हिसाब किताब करवाने में राखी की मदद लेते थे।

भूल का एहसास

किसी गाँव के सरकारी स्कूल में सोनू कक्षा आठवीं का छात्र था। वह बहुत ही सीधा-साधा और होनहार छात्र था। उसके स्कूल की ख्याति दूर-दूर तक फैली थी। कारण था, वहाँ के प्रतिभावान बच्चों की उपलब्धि और स्कूल का अनुशासन। उसके स्कूल में एक बार गणित विषय के एक नए शिक्षक 'दत्ता सर' आये। दिखने में काफी ऊँचे पूरे और आकर्षक व्यक्तित्व के वे धनी थे। पहले ही दिन वे सोनू की कक्षा में गए। उनको देखते ही सभी बच्चे अपनी जगह में खड़े हो गए। ऐसा सम्मान पाकर दत्ता सर के चेहरे में मुस्कान ख़िल गई। अचानक उनकी नज़र सोनू पर पड़ी जो कुर्सी में ही बैठा था। क्रोध से वे तिलमिला उठे। गुस्से में वे उनके क़रीब गए। सोनू फिर भी नहीं उठा। "तेरी इतनी हिम्मत। शिक्षक के सामने भी बैठा है। तू खड़ा नहीं हो सकता क्या", दत्ता सर ने कहा।

सोनू कुछ नहीं बोल पाया। वह कोई सफाई दे पाता उससे पहले ही दत्ता सर ने 'आव देखा न ताव', और पास में पड़ी छड़ी उठाई और उसकी हथेलियों को पीटना शुरू कर दिया। पूरी कक्षा में डर के मारे सन्नाटा छा गया। तभी एक बच्चे ने घबराते हुए कहा," सर जी सोनू खड़ा नहीं हो सकता।"

दत्ता सर ने पूछा, " क्यों खड़े नहीं हो सकता, क्या उसके पैर टूट गए हैं?"

सर वह बचपन से ही खड़ा नहीं हो सकता, वह दोनों पैर से दिव्यांग है", उस बच्चे ने कहा।

दत्ता सर ने सोनू की ओर देखा। उनकी आँखों से अश्रु की अविरल धारा बह रही थी। फिर उन्होने सोनू के पैरों की ओर नज़र डाली। उसे देखकर उन्हें अपनी ग़लती का अहसास हुआ। पश्चाताप की अग्नि में वे जलने लगे। उनका हृदय द्रवित हो उठा। वे ख़ुद को रोक नहीं पा रहे थे। दत्ता सर की आँखों से भी आँसू बह निकले। वे सोनू को गले लगाकर फूट-फूट कर रोने लगे। उसकी हथेलियों को चूमा और अपने हाथों से सोनू के आँसू पोछते हुए कहा, "बेटा मुझे माफ़ कर दो। मुझसे बहुत बड़ी भूल हुई है आज।"

"नहीं सरजी! इसमें आपकी कोई गलती नहीं है", सोनू ने बड़े प्यार से कहा, और दोनों फ़फ़क-फ़फ़क कर रोने लगे। छुट्टी के बाद दत्ता सर सोनू के घर गए और उसके पालकों से मिलकर माफी माँगी। सोनू के पिताजी ने कहा, "गुरूजी आप लोग माली की तरह हैं। आपकी देखरेख में ही हमारे बच्चे फूलों की तरह महकते हैं और अच्छे इंसान बनते हैं। आप लोग माता-पिता से भी बढ़कर हैं।"

यह सुनकर दत्ता सर को चैन मिला। उस दिन से उनके भीतर अभूतपूर्व परिवर्तन आया। वे उस विद्यालय के सबसे प्रिय शिक्षक बन गए। दत्ता सर को अहसास हो गया कि शिक्षक बच्चों की वस्तु स्थिति, उनकी समस्याओं और सच्चाई को जाने बिना उन पर बरस पड़ते हैं। पर अच्छी बात यह है कि शिक्षक अपनी ग़लती जानने के बाद प्रायश्चित करते हैं और अपनी भूल भी सुधारते हैं।

प्रोत्साहन

सीमा बहुत ही होनहार लड़की थी। पढ़ाई के अलावा नृत्य और गाने का उसे बहुत शौक था। अपने अच्छे व्यवहार के कारण वह अपने शिक्षकों की बहुत प्रिय छात्रा थी। शाला में वार्षिक उत्सव की तैयारी चल रही थी। सभी बच्चे तैयारी में लगे थे। जब बच्चे नृत्य का अभ्यास करते थे ,सीमा का मन भी नाचने के लिए मचल उठता था। वह अपना हाथ पाँव हिलाने लग जाती। उनके चेहरे के भावों के तो क्या कहने ,पर सारी लड़कियाँ उनका मजाक उड़ाती थी। "चल भाग लंगड़ी कहीं की, ये तेरे बस का काम नहीं है।" लड़कियों की ऐसी बातें सुनकर सीमा का मन टूट जाता था। वह अकेले में जाकर फूट-फूट कर रोती थी। एक दिन उनकी शिक्षिका की नज़र सीमा पर पड़ी। वह दूर खड़े होकर नृत्य का अभ्यास करती लड़कियों को देख रही थी। उनके आँखों की नमी को शिक्षिका समझ गई। वह सीमा के क़रीब जाकर उसके सिर पर हाथ फेरी। उन्होंने सीमा से उसकी उदासी का कारण पूछा। सीमा सब कुछ बता दी। शिक्षिका उन बच्चों के पास सीमा को ले जाकर बोली, "सीमा इस वार्षिक उत्सव के सभी नृत्य के लिए गायन करेगी। सीमा की आवाज बहुत ही मधुर है और यह बहुत अच्छा गाना भी गाती है।''

ये सुनकर सभी बच्चे दंग रह गए। शिक्षिका ने उन लड़कियों को समझाया कि हमें किसी का मजाक उड़ाने के बजाय, उनका हौसला बढ़ाना चाहिए। शिक्षका की

सूझबूझ से सभी को ये बात समझ में आ गई। सीमा को अब अपनी बैसाखी पर गुस्सा नहीं आता था। अपनी शिक्षिका का स्नेह आधार और सतत प्रोत्साहन से वह जीवन में काफी आगे बढ़ी। बड़ी होकर वह एक अच्छी शिक्षिका बनी और सकारात्मक ऊर्जा के साथ हमेशा सब को प्रोत्साहित करती और प्यार की सुगंध फैलाती थी।

सफेद दाग

कुछ दिनों से रितु के हाथ पैर में सफेद रंग के कुछ दाग उभरने लगे थे। वो अब फूल आस्तीन के कपड़े पहनकर स्कूल आने लगी ताकि कोई देख न सके। आजकल किसी शंका से वह चुपचाप रहती थी। सहेलियों के साथ खेलती भी नहीं थी। बस चुपचाप एक जगह बैठे रहती थी, पढ़ाई में भी उसका मन नहीं लगता था। वह इस दाग के कारण परेशान रहने लगी थी। धीरे-धीरे दाग बढ़ने लगा, चेहरे पर भी कहीं कहीं दिखाई देने लगा, अब वह कितना छुपाती। उसकी सहेलियाँ उससे दूर रहने लगी सब यही सोचते कि रितु को कोई बड़ी बीमारी हो गई है। अब तो रितु निराशा के अंधकार में जाने लगी। घर वाले उसका इलाज करवा रहे थे, पर वह स्कूल जाना छोड़कर घर पर ही रहने लगी। उसकी लगातार अनुपस्थिति से उसकी शिक्षिका को चिंता होने लगी। उन्होंने बच्चों से कारण पूछा तो सब ने चुप्पी साध ली। बड़ी मुश्किल से बच्चों ने जवाब दिया कि "रितु को बीमारी है मैम इसलिए वो स्कूल नहीं आएगी।"

शिक्षिका ने बच्चों को समझाया कि सफेद दाग कोई बीमारी नहीं है, रितु के दाग जल्दी ठीक हो जाएँगे। हम सभी उसके साथ कोई भेदभाव नहीं करेंगे और उसको निराश नहीं होने देंगे। उसकी शिक्षिका रितु के घर गई उससे बात की और स्कूल आने ले लिए मना ली। अब सभी बच्चे उसके साथ अच्छा व्यवहार करने लगे।

पायल

सोनू को लंबे-लंबे बाल पसंद थे, उसे रंगबिरंगी चूड़ियाँ पहनना बहुत भाता था। घुँघरू वाले पायल पहनकर उसे छमछम-छमछम बजाने का मन करता था। हो भी क्यों न हो, उनकी सभी सहेलियाँ भी तो ऐसा ही करती थी। पर उसकी इच्छा पूरी ही नहीं हो पाती थी। पिताजी उसके बाल कटवा देते थे, और उसे लड़कों जैसे कपड़े पहनाकर रखते थे। कभी-कभी वह अपनी माँ से चुनरी की दो चोटी बनवाकर अपने बालों में लगा लेती थी। और अपनी इस इच्छा को पूरा करती थी। उसका कोई भाई नहीं था, और पिताजी को बेटे की लालसा थी। इसी कमी को पूरा करने के लिए वे सोनू को लड़कों की तरह कपड़े पहनाते थे, पर सोनू का मन तो कुछ और ही चाहता था। सुंदर-सुंदर फ्रॉक, रंग-बिरंगी चूड़ियाँ और तरह-तरह के क्लिप को देखकर उसका बाल मन ललचा उठता था। दादाजी उसके मासूम मन को पढ़कर दुखी हो जाते थे, पर उनकी भी नहीं चलती थी। एक बार सोनू ने दादाजी से कहा, "दादू मेरे लिए पायल खरीद दो न, मैं उसे पहनकर छम-छम नाचूँगी।''

दादाजी सोनू का मन रखने के लिए उसी दिन ही उसे सुनार के पास लेकर गए, और उसके नाप की घुँघरू वाली सुंदर पायल खरीदकर पहना दिए। सोनू उसे पहनकर बहुत खुश हुई, वह नाचने लगी। उसे पिताजी का भी डर नहीं था। सोनू की इस खुशी को देख दादाजी का मन भी ख़ुशियों से भर गया, क्योंकि उनके लिए बच्चों की खुशी ज्यादा मायने रखती थी।

अनुशासन

रानी अपने माता पिता की लाड़ली बेटी थी। वह कमल के फूल की तरह सुंदर और मृदुल स्वभाव की थी। वह दूसरी कक्षा में पढ़ती थी। हर बच्चे की तरह उसको भी खेलना कूदना अच्छा लगता था। कभी-कभी वह खेलकूद के चक्कर में पढ़ना लिखना त्याग देती थी। एक बार उनके पिताजी ने उसको खेलते देखकर पास बुलाया और कहा, "रानी बेटी चलो पहाड़ा सुनाओ।" रानी पहाड़ा सुनाने लगी। सुनाते-सुनाते वह तेरह की पहाड़ा में आकर अटक गई। पिताजी को बहुत गुस्सा आया। उन्होंने कहा, "जाओ गोबर बीनने, और जब तक टोकरी न भरे, घर वापस मत आना।" रानी टोकरी उठाई और दोपहर की चिलचिलाती धूप में घर से निकल गई। बगीचे में उनको कहीं गोबर नहीं मिला। वह रोते-रोते आम के पेड़ की छाया में बैठ गई। उसको खोजते-खोजते माँ उसके पास गई। उनको गले लगाकर चुप कराई और घर चलने के लिए बोली। "नहीं माँ! मैं बिना गोबर लिए घर कैसे जाऊँ, बाबूजी डाँटेंगे।" माँ का दिल कहाँ मानता है। बेटी के मनोभावों को समझते हुए इधर-उधर से गोबर इकट्ठा करके टोकरी में डाली और दोनों घर की ओर गए। पिताजी दरवाजे पर इंतज़ार करते बैठे थे। रानी माँ के आँचल में छुप गई। पिताजी रुआँसा होते हुए अपनी लाडली बिटिया को गले गला लिए। माता-पिता के अनुशासन, प्यार, ममता और सही परवरिश से रानी बड़ी होकर दुनिया में अपना नाम कमाई और अपने माता पिता को गौरवान्वित की। जैसे गोबर की

खाद से मिट्टी उपजाऊ बनती है, धूप, पानी और उचित देखरेख से नन्हा पौधा सुदृढ वृक्ष बनता है, वैसे ही नन्हे-नन्हे बच्चे भी सही देखरेख और उचित मार्गदर्शन से पल्लिवत पुष्पित और फलित होते हैं।

मुर्गे की चोरी

नीरज को पक्षियों से कुछ ज्यादा ही लगाव था। वह अपने पिताजी से घर में कोई भी पक्षी पालने की जिद करते रहता था, पर उनके पिताजी बिल्कुल भी इस पक्ष में नहीं थे। एक बार नीरज ख़ुद ही बाजार से एक चूजा खरीदकर ले आया। चूजा दिखने में बहुत ही सुंदर था। नीरज ने उस चूजे का नाम "वनराज" रखा।

नीरज चूजे का पूरा ध्यान रखता था। उसे खाने पीने की कोई कमी नहीं होने देता था, उसे कुत्ते और बिल्ली से बचाकर रखता था। घर में चूजे के लिए एक सुरक्षित जगह भी निर्धारित हो गई। अच्छी देखभाल के कारण चूज़े का सही विकास होने लगा। चूजा बड़ा होकर तंदरुस्त मुर्गा बन गया। एक दिन उनके माता पिता किसी काम से बाहर गए। अब वनराज की देखभाल और घर के देखरेख की जिम्मेदारी नीरज पर थी। नीरज घर के कामकाज में उलझ गया और उसका ध्यान कुछ देर के लिए वनराज से हट गया। अचानक वनराज का ख़्याल आते ही वह घर के पीछे के आँगन में गया। पर वनराज कहीं दिखाई नहीं दिया। वनराज को न पाकर वह बहुत चिंतित हो गया। इधर उधर खोजने पर भी वनराज नहीं मिला। अब किसी आशंका से उसके आँखों से आँसू झरने लगे। वह घर से बाहर निकला और अपने दोस्तों को सारी बात बताई। फिर वे वनराज को ढूँढनें की योजना बनाकर आस पास के सभी घरों में गए। किसी के घर में भी वनराज नहीं मिला। दुखी

मन से वे एक जगह बैठ गए। तभी बच्चों को याद आया कि वे लोग तो छक्कन चाचा के यहाँ जाना ही भूल गए। सारे बच्चे दौड़ते-दौड़ते गए और छक्कन चाचा के घर में घुस गए। उनको देखते ही छक्कन चाचा चिल्लाने लगे, अरे तुम लोग अंदर क्यों जा रहे हो, तुम्हारा मुर्गा मेरे घर में नहीं है।" ये सुनकर बच्चों का शक यकीन में बदल गया। उन्हें पता चल गया कि वनराज यहीं है।

वे बोले, "चाचाजी हमने तो आपसे मुर्गे के बारे में पूछा ही नहीं फिर आपको कैसे पता.....?"

सभी बच्चे भीतर जाकर सारे कमरे छान मारे, पर भीतर बहुत अंधेरा था। डरा सहमा वनराज बच्चों की आवाज पहचानकर कुकड़ू-कूं, कुकड़ू-कूं, करने लगा। वनराज की आवाज सुनकर सभी बच्चे कमरे की तरफ दौड़े। एक बड़ी सी टोकरी के अंदर, छक्कन चाचा ने वनराज को छुपा दिया था। टोकरी उठाकर नीरज ने वनराज को गोद में उठा लिया। वनराज को पाकर वह बहुत खुश हुआ। सभी बच्चे वनराज को लेकर बाहर आये और छक्कन चाचा से बोले, "चाचाजी चोरी करना और झूठ बोलना बहुत बुरी बात है।" चाचाजी को अपनी गलती का एहसास हो गया, उसने बच्चों से माफी माँगी।

फिर सभी बच्चे वनराज को लेकर नीरज के घर गए। जब नीरज के माता पिता घर आये तो नीरज ने सारी बात उन्हें बता दी। नीरज के माता पिता ने सभी बच्चों को उनकी सूझबूझ के लिए शाबासी दी।

गुड़िया की शादी

खुशी एक छोटे से गाँव में रहती थी। बात उस समय की है जब गर्मी की छुट्टियाँ चल रही थी। खुशी घर में घुसे-घुसे ऊब जाती थी। तेज धूप के कारण उसे घर से कोई निकलने नहीं देते थे। उसी खिलौने से खेलने का मन भी नहीं करता था। वह कभी दादा जी के पास जाती, कभी दादी के पास। उसका एक भाई था जो अभी बहुत छोटा था इसलिए दोपहर में सो जाता था। खुशी ने दादाजी से कहा, "दादाजी मुझे नए खिलौने चाहिए, ये सब पुराने हो गए हैं।"

"ठीक है बिटिया, अभी अक्ति त्यौहार आने वाला है, आपके लिए पुतरा-पुतरी लेंगे, फिर उसकी शादी करायेंगे।"

खुशी दादाजी की बात सुनकर उछल पड़ी। अब वह गुड़िया की शादी की तैयारी में लग गई। कपड़ों की कतरन को वह इकट्ठा करके रखने लगी ताकि अपनी गुड़िया के लिये कपड़े सिलवा सके। कुछ गहने भी बना ली। गुड़िया के लिए बिस्तर, कुर्सी, सोफा और बर्तन भी इकट्ठा कर ली।

दादाजी बोले, "बिटिया कल अक्ति है, आज शाम को मेरे साथ बाजार चलना, आपके लिए पुतरा पुतरी लेंगे।"

"जी दादाजी।" खुशी चहकते हुए बोली।

शाम को दोनों बाजार गए और सुंदर सुंदर पुतरा पुतरी और मौर खरीदे। दूसरे दिन दादी सुबह सुबह आँगन को साफ सुथरा करके चौक पूरने लगी। दादाजी दो छोटी-छोटी लकड़ियों से मंडप बनाये, फिर उसे आम की पत्तियों से सजाए। खुशी चावल को कई रंगों से रंगकर मंडप को सजा रही थी। खुशी की माँ आँगन और दरवाजे में चूने से अल्पना बनाई। घर में सुबह से ही त्यौहार का माहौल था। सभी अपने-अपने कामों में व्यस्त थे। बच्चों की टोली भी बाजे गाजे के साथ आ गई। पहले हल्दी की रस्म हुई, फिर शाम को बारात आई। बच्चे ख़ूब नाचे गाये। खुशी की माँ पकवान भी बना ली थी। अब पुतरा-पुतरी को मंडप में बिठाया गया। घर और आस पड़ोस के लोग पुतरा-पुतरी को पीले चावल का टीका लगाकर, टीकावन की रस्म पूरी कर रहे थे और वही पास में रखे डिब्बे में सिक्के डालते जा रहे थे। कुछ ही देर में खुशी का डिब्बा सिक्कों से भर गया। वह उसे एक किनारे में रखकर अब सबको पकवान खिलाने लगी।सभी बच्चे बहुत खुश थे। कुछ देर बाद खुशी मंडप के पास गई तो देखा कि पैसों वाला डिब्बा वहाँ नहीं था। वह परेशान हो गई और अपनी माँ से पूछी। माँ को भी कोई जानकारी नहीं थी। खुशी रोने लगी। बाकी बच्चे भी उदास हो गए। आखिर डिब्बा गया तो गया कहाँ? दादाजी ने पूछा, ‘‘बताओ अभी कौन नहीं है यहाँ पर?’’ सबने अपने आजू बाजू को देखा, तब पता चला कि रौशनी नहीं थी। वो चुपके से अपने घर चली गयी थी। अब सभी को उसी पर शक़ होने लगा। सभी बच्चे दादाजी के साथ रौशनी के घर गए। दादाजी ने रौशनी से उस डिब्बे के बारे में पूछा। पहले रौशनी साफ मना कर दी। फिर दादाजी के समझाने पर उसने स्वीकार किया कि डिब्बा उसी ने चुराया है। उसने सबसे माफी माँगी और पैसों से भरा डिब्बा खुशी को वापस कर दी।

रक्षाबंधन का उपहार

रक्षाबंधन का त्यौहार आने वाला था। इस साल महेश अपनी दीदी को अपने पैसे से उपहार देना चाहता था। पर वह क्या करें उसके पास तो पैसे ही नहीं थे। हर बार उसके पिताजी ही उपहार खरीद कर लाते थे जिसे वह अपनी दीदी को देते थे। जब से उसकी दीदी की शादी हुई तब से वह अपने को बड़ा समझने लगा था हालाँकि अभी वह चौदह साल का ही था। वह मन ही मन सोचने लगा कैसे करें पैसे कहाँ से लाए? महेश का एक दोस्त था सूरज। उसने अपने दोस्त से अपने मन की बात बताई। "सूरज इस साल मैं अपने दीदी को रक्षाबंधन में अपने पैसे से कोई अच्छा उपहार खरीद कर देना चाहता हूँ पर मेरे पास पैसे नहीं है, मैं पैसे कैसे कमाऊँ?

सूरज बोला, "मेरे पास एक उपाय है, चलो हम लोग दातुन बेचकर पैसा इकट्ठा करते हैं। पास के खेत में बबूल के कई पेड़ हैं, दोनों मिलकर दातुन तोडेंगे और उसे अपने गाँव में बेचेंगे जिससे तुम्हारे पास पैसे हो जाएँगे। अगले दिन रविवार होने के कारण स्कूल की छुट्टी थी, इसलिए सुबह-सुबह दोनों दातुन तोड़ने चले गए। खेत में बबूल के पेड़ में हरी हरी डालियाँ दिखाई दे रही थी। दोनों दोस्त पेड़ में चढ़कर दातुन तोड़े और गाँव की तरफ बेचने चले गए। हरे-हरे ताजे दातुन

देखकर गाँव वाले उनके दातुन खरीद लिए। अब महेश बहुत खुश हो गया क्योंकि इस साल दीदी के लिए उपहार वह अपने पैसे से ही खरीद पायेगा। यह सोच उसने अपने दोस्त सूरज को गले से लगा लिया।

महेश की माँ त्यौहार की तैयारियों में लगी थी, घर में दो चार प्रकार के व्यंजन भी बना ली थी। घर आँगन साफ सुथरा और लिपा पुता दिख रहा था।

"महेश इस बार दीदी के लिए क्या लोगे, कल रक्षाबंधन है, आज अपने बाबूजी के साथ बाजार चले जाना और मनपसंद उपहार खरीदवा लेना", माँ ने कहा।

"नहीं माँ मैं सूरज के साथ जाऊँगा, इस बार मैं खुद ही उपहार ले लूँगा।"

"अरे पैसे कहाँ से लाएगा।"
"मेरे पास है मेरे गुल्लक में।"

माँ अपने काम में फिर से व्यस्त हो गई।

महेश रक्षाबंधन के दिन सुबह से नहा धोकर, नए कपड़े पहनकर तैयार हो गया। लिपे पुते हुए आँगन में माँ रंगोली भी बना ली। महेश दीदी का बेसब्री से इंतजार कर रहा था। आखिर उसकी दीदी, जीजाजी के साथ आ ही गई। दोनों को देखते ही महेश खुशी से उछल पड़ा। दीदी भी भाई को देख ख़ुश हो गई।

दीदी चौक चंदन पूर कर उसमें पीढ़ा रखी। आरती की थाल सजाई। भाई को पीढ़े में बिठाकर आरती उतारी तिलक लगाई राखी बाँधी और उसका मुँह मीठा कराई। उसके बाद महेश ने दीदी के हाथ में उपहार रख दिया। दीदी मुस्कुराते हुई पैकेट खोली, तो उसमें एक चैन और दो छोटे-छोटे झुमके मुस्कुरा रहे थे। दीदी ने पूछा, "ये तुमने लिया?"

"हाँ दीदी, अपने पैसे से लिया हूँ, अब मैं बड़ा हो गया हूँ न।"

यह सुनकर दीदी की आँखें नम हो गई उसने भाई को गले से लगा लिया। हालाँकि वे गहने नकली थे पर उसके लिए ये उपहार हर बार के महँगे उपहार से भी ज्यादा कीमती थे।

अब माँ ने पूछा ,"बेटा सच सच बताओ ,उपहार खरीदने के लिए तुम्हें पैसे कहाँ से मिले।"

तब महेश ने माँ को सारी बात बता दी। महेश की बात सुनकर उसकी माँ की आँखें भर आई और उसने बेटे को गले से लगा कर खूब आशीर्वाद दी।

मंच का भय

स्कूल में गणतंत्र दिवस की तैयारियाँ चल रही थी। रानू पहली कक्षा में पढ़ती थी, गणतंत्र दिवस के लिये वह एक देशभक्ति कविता तैयार की थी। अपनी कक्षा में गुरूजी के सामने वह अपनी कविता सुनाई तब बच्चों ने खूब तालियाँ बजाई और सभी ने उसकी ख़ूब तारीफ की।

गणतंत्र दिवस का उत्सव हाई स्कूल में मनाया जाता था। रानू सुबह जल्दी उठकर नहा धो ली और यूनिफॉर्म पहनकर तैयार हो गई। वह समय पर स्कूल पहुँच गई, अपने स्कूल में झंडा फहराने के बाद प्राथमिक शाला के बच्चे प्रभात फेरी के लिए गाँव की गलियों में गए। ग्राम भ्रमण करते-करते वे लोग हाई स्कूल पहुँच गए। उस दिन रानू को सुबह से ही बहुत डर लग रहा था। हाई स्कूल में पहुँचने के बाद उसका डर और बढ़ने लगा। वह सोचने लगी कि मंच में जाकर कैसे कविता बोलेगी। उस स्कूल में बहुत सारे बड़े बच्चे शिक्षक और ग्रामवासी गणतंत्र दिवस के उत्सव में शामिल होने आए थे। इतने सारे लोगों को देखकर वह भीतर ही भीतर डर रही थी। इससे पहले वह कभी मंच में भी नहीं गई थी। वहाँ झंडारोहण के बाद गणतंत्र दिवस का मंचीय कार्यक्रम शुरू हुआ। कुछ देर के बाद कविता वाचन के लिए रानू का नाम मंच से पुकारा गया, पर वह अपने जगह में चुपचाप बैठी ही रही। शिक्षक के द्वारा दो, तीन बार नाम पुकारने और उनकी सहेलियों के कहने पर वह खड़ी तो हो गई मगर बहुत धीरे-धीरे मंच

की ओर जाने लगी। रानू के गुरूजी उसके मन की बात भाँप लिए और उसके डरने का कारण भी समझ गए। वे उसके पास जाकर उसका हौसला बढ़ाये। उसका हाथ पकड़कर उसे मंच तक ले गए और मंच के पास ही खड़े रहे ताकि रानू को डर न लगे।

पहले तो रानू के हाथ पैर काँपने लगे। फिर अपने गुरूजी को देखकर उसका डर कम होने लगा और उसने बहुत ही बढ़िया प्रस्तुति दी। उसकी कविता सुनकर सभी लोग ख़ूब ताली बजाए। उस दिन से रानू का आत्मविश्वास बढ़ गया और मंच का बोलने का भय भी खत्म हो गया। अब वह हर कार्यक्रम में खुशी खुशी भाग लेती और बिना डरे प्रस्तुति देती।

इस तरह अपने गुरूजी के कारण वह बड़ी होकर प्रखर वक्ता बनी।

लक्ष्मी की प्लेट

तीन साल की लक्ष्मी बहुत चंचल थी। वह अपने दादा दादी के आसपास ही घूमती रहती थी, माता पिता से ज्यादा समय, दादा दादी के साथ ही गुजरता था। लक्ष्मी दादाजी के साथ ही उन्ही की थाली में खाना भी खाती थी। रात में खाना खाने के बाद दादा जी उसे रोज नई नई कहानी सुनाते थे और लक्ष्मी कहानी सुनते सुनते दादा की गोद में ही सो जाती थी। दादा और पोती में बहुत लगाव था। कभी कभी दादाजी बाहर जाते तो लक्ष्मी बहुत रोती थी, इसलिए दादाजी कहीं भी जाते तो शाम तक लौट ही आते थे। पिछले दो साल से ऐसे ही चल रहा था।

दादी अक्सर चावल आटे की मोटी रोटियाँ बनाती थी, जो लक्ष्मी को बहुत पसंद था। उस दिन दादी नए चावल के आटे से मोटी रोटी 'अँगाकर' बनाई थी। दादाजी को किसी जरूरी काम से बाहर जाना था, इसलिए वे जल्दी ही खाना खाने बैठ गए। उनकी थाली में गर्मागर्म अँगाकर रोटी और टमाटर की चटनी देख लक्ष्मी का जी ललचा गया और वह खेलना छोड़कर दादाजी के साथ खाने बैठ गई। दादी बोली- "बेटी आ जा अलग से खा ले, दादाजी को आज बाहर जाना है।" पर लक्ष्मी को तो दादा के साथ ही खाना अच्छा लगता था। दादाजी पहले लक्ष्मी को खाने देते थे, जब लक्ष्मी का पेट भर जाता तभी वे खाते थे। वे कभी अपना झूठा लक्ष्मी को नहीं खिलाते थे। इसी चक्कर में अक्सर उसको देर हो जाती थी। आज भी उसे देर हो रही थी, पर क्या करते लक्ष्मी को तो उसी की थाली में खाना था।

लक्ष्मी के खाने के बाद, वे जल्दी जल्दी खाकर शहर चले गए। शहर में बर्तनों की दुकान में उसे सुंदर सी प्लेट दिखाई दी। प्लेट को देखते ही उसे लक्ष्मी का ख्याल आया। उसने सोचा शायद लक्ष्मी इस प्लेट को देख अलग से खाना शुरू कर देगी। यही सोचकर उसने वह प्लेट खरीद लिया।

शाम को दादाजी को देख लक्ष्मी खुशी से उछल पड़ी। दादू भी अपनी पोती को गोद में उठा लिए। रात के खाने के समय दादाजी, लक्ष्मी को प्लेट दिखाए। "बिटिया तुम्हारे लिए शहर से ये प्लेट लाया हूँ, देखो कितनी सुंदर है। घर की थालियाँ एकदम पुरानी हो गई है इसलिए अपनी बिटिया के लिए आज सुंदर सी प्लेट खरीदा हूँ। अब इसी में खाना।" लक्ष्मी प्लेट देखकर बहुत खुश हो गई और रात का खाना उसी में खाई। दादाजी उसके पास ही बैठकर खाना खा रहे और मुस्कुरा रहे थे। वे निश्चिंत थे कि अब लक्ष्मी साथ खाने की जिद नहीं करेगी और उन्हें कहीं जाने में देर भी नहीं होगी। एक दो साल के बाद लक्ष्मी को स्कूल भी तो जाना है, इसलिए उसे ये सिखाना जरूरी था।

दादाजी बहुत खुश थे कि लक्ष्मी को दुखी किये बिना उनका यह तरीका काम कर गया।

मदद

दीपावली त्यौहार के पंद्रह दिन पहले ही गाँवों में लिपाई-पोताई का काम शुरू हो जाता है। मीनू की माँ भी घर की साफ सफाई और लिपाई-पोताई के कामों में व्यस्त रहती। काम करते करते उसे नहाने के लिए बहुत देर हो जाती थी। उसके अलावा घर के कपड़े चादर भी धोना जरूरी रहता है। दोपहर के समय, मीनू की माँ चादरों को धोने के लिए तालाब गई थी। घर में मीनू और उसके पिताजी ही थे। मीनू आँगन में खेल रही थी और उनके पिताजी आँगन में बैठे धूप का मजा ले रहे थे। तभी अचानक एक आदमी घर के पीछे बनी बाड़ी से होते हुए दौड़ते-भागते, हाँफते आँगन में आया और उनके पिताजी के पैर पकड़कर गिड़गिड़ाने लगा। वह बहुत डरा हुआ था।

"दाऊजी मुझे बचा लो, मेरी जान खतरे में है", इतना कहकर वह रोने लगा।

पिताजी उनको अंदर कमरे में छुपने के लिए इशारा किये। वह अंधेरे कमरे में जाकर छुप गया।

उसी समय गाँव वालों की भीड़ घर के अंदर आ गई। सभी लोग पिताजी के ऊपर प्रश्नों की बौछार करने लगे और चोर को घर में पनाह देने की बात कहने लगे।

पिताजी ने संतुलित भाव से कहा, "जाओ घर की तलाशी ले लो, मेरे घर के अंदर कोई नहीं आया है। हमारे घर के अंदर आने के तीन चार दरवाजे है, पीछे बाड़ी और गौशाला भी है। उधर भी देख लो, हो सकता है वहीं छुपा हो या किसी दरवाजे से निकलकर भाग गया हो हमें कुछ भी नहीं पता।"

गाँव में मीनू के पिताजी का दबदबा था इसलिये किसी की हिम्मत नहीं हुई कि कमरों की तलाशी ले ले। गौशाला और बाड़ी को देखते हुए वे सभी लोग पीछे वाले दरवाजे से चले गए। उन सबके जाने के बाद पिताजी घर के सभी दरवाजे बंद किये। फिर कमरे के अंदर उस व्यक्ति के पास जाकर पूछा, "तुमने क्या अपराध किया है जो सारे लोग तुम्हारी जान के पीछे पड़ गए?"

उसने कहा, "मैं उन लोगो के साथ जुआ खेल रहा था। मैं लगातार हारते जा रहा था इसलिए वहाँ से भाग आया। उन लोगों को लगा कि मैं पैसे लेकर भागा हूँ इसलिए वे लोग मुझे पकड़ने के लिए मेरे पीछे दौड़ रहे थे। सभी लोग बहुत गुस्से में थे इसलिए मैं अपनी जान बचाने के लिए यहाँ घुस गया। मैं बुरा आदमी नहीं हूँ, न ही पैसे लेकर भागा हूँ, केवल अपनी जान बचाना चाहता था।"

आप मुझे छुपने की जगह दिए। आपका ये एहसान मैं ज़िंदगी भर नहीं भूलूँगा, आपके कारण आज मेरी जान बच पाई। पिताजी ने उसे समझाया कि ये सब काम नहीं करना चाहिए, हमेशा मेहनत करके जीवनयापन करना चाहिए। मीनू ये सब बहुत ध्यान से देख रही थी।

उस व्यक्ति को देखकर वह भी डर गयी थी। उसने पिताजी से पूछा, "पिताजी आप इसे छुपने के लिए जगह क्यों दिए।"

पिताजी ने समझाया कि निर्दोष को सजा नहीं देना चाहिए और जो हमारे पास मदद माँगने के लिए आते हैं तो उसकी मदद करनी चाहिए। यह भी पुण्य का काम है।

अनिता चन्द्राकर

व्याख्याता, शा. उ. मा. वि. पहंडोर (पाटन), दुर्ग, छ.ग.